बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 237

जरूरी कदम

आर्थिक मामलों की कैबिनेट समिति ने नीतिगत विनिवेश के क्षेत्र में पहल कर दी है। विनिवेश की इस योजना के अनुसार सरकार भारत पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड (बीपीसीएल), शिपिंग कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया (एससीआई), कंटेनर कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया (कॉनकॉर), टिहरी हाइड्रो डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन इंडिया लिमिटेड (टीएचडीसीआईएल) और नॉर्थ ईस्टर्न इलेक्ट्रिक पॉवर कॉर्पोरेशन लिमिटेड (नीपको) में अपनी हिस्सेदारी बेचेगी। ध्यान देने वाली बात है कि टीएचडीसीआईएल और नीपको का अधिग्रहण एक अन्य सरकारी कंपनी एनटीपीसी करेगी जबकि बीपीसीएल और एससीआई में सरकार अपनी हिस्सेदारी की बिक्री करने के साथ-साथ इनका नियंत्रण भी हस्तांतरित कर देगी। जबकि कॉनकॉर में सरकार पूरी हिस्सेदारी नहीं बेचेगी लेकिन यहां भी वह नीतिगत खरीदार को नियंत्रण हस्तांतरित कर देगी। इसके अलावा सरकार ने यह निर्णय भी लिया है कि वह चुनिंदा सरकारी कंपनियों में अपनी हिस्सेदारी 51 फीसदी से कम करेगी। इससे विनिवेश किए जाने लायक परिसंपत्तियों में इजाफा होगा। हालांकि टीएचडीसीआईएल और नीपको के शेयरों को एनटीपीसी को हस्तांतरित करना पूरी तरह विनिवेश के विचार के अनुरूप नहीं है क्योंकि इस स्थिति में कंपनियों का नियंत्रण सरकार के हाथ में ही रहेगा। बहरहाल, बुधवार को विनिवेश की प्रक्रिया को आगे ले जाने तथा नीतिगत निवेश को गति प्रदान करने का जो निर्णय लिया गया वह यकीनन सही दिशा में उठाया गया कदम है।

बहरहाल, अभी यह देखा जाना है कि सरकार इन कंपनियों की हिस्सेदारी बेचने और प्रबंधन नियंत्रण हस्तांतरित करने के काम में कुल कितना समय लेती है। उदाहरण के लिए बीपीसीएल की बात की जाए तो नुमालीगढ़ रिफाइनरी में कंपनी के शेयर पहले एक अन्य सरकारी कंपनी को हस्तांतरित किए जाएंगे। नुमालीगढ़ रिफाइनरी के शेयरों का हस्तांतरण तथा बीपीसीएल तथा अन्य कंपनियों के संभावित नीतिगत खरीदारों द्वारा की जाने वाली जांच परख में समय लगेगा। चालू वर्ष में 1.05 लाख करोड़ रुपये का विनिवेश लक्ष्य हासिल करने के लिए सरकार को जल्दबाजी में कदम नहीं उठाने चाहिए। ऐसा करने से मूल्यांकन प्रभावित हो सकता है। नियंत्रण का स्थानांतरण अच्छी दर पर होना चाहिए। मौजूदा बाजार मूल्य पर देखें तो बीपीसीएल में सरकारी हिस्सेदारी का मूल्य करीब 63,000 करोड़ रुपये है और कॉनकॉर तथा एससीआई का मूल्यांकन करीब 12,900 करोड़ रुपये होगा।

चूंकि सरकार ने परिसंपत्तियों की बिक्री के माध्यम से फंड जुटाने का महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य तय किया है इसलिए यदि नीतिगत विनिवेश का निर्णय वित्त वर्ष के आरंभ में लिया गया होता तो बेहतर होता। इतना ही नहीं भविष्य में विनिवेश की प्रक्रिया अधिक व्यवस्थित होनी चाहिए। नीतिगत और अल्पांश विनिवेश के लिए कंपनियों की सूची पहले से तैयार रखी जानी चाहिए। अंतिम समय में बजट लक्ष्य पूरा करने की हड़बड़ी से बचा जाना चाहिए क्योंकि इससे मूल्यांकन पर बुरा असर पड़ सकता है। इससे बाजार को भी पूरा समय मिलेगा और वह बोली की तैयारी कर सकेगा। इससे बेहतर मूल्य हासिल करने में मदद मिलेगी।

नीतिगत विनिवेश को लेकर देर से किया गया निर्णय सरकार द्वारा इस वर्ष की वित्तीय समस्याओं को ढांपने के काम को और मुश्किल करेगा। कर राजस्व के लक्ष्य से काफी कम रहने का अनुमान है। व्यय में कमी के अभाव में राजकोषीय घाटा लक्ष्य से पार जा सकता है। ऐसे में विनिवेश प्रक्रिया के नतीजे से परे सरकार को अपनी राजकोषीय स्थिति का अधिक बेहतर तरीके से आकलन करना होगा। यदि विनिवेश की प्रक्रिया का इस्तेमाल खपत व्यय की पूर्ति में करने के बजाय नई परिसंपत्तियों के निर्माण में किया जाए तो यह अर्थव्यवस्था के लिए कहीं अधिक लाभदायक साबित होगा।

अजय मोहंती

गहराता जा रहा है रोजगार का संकट

देश में बढ़ती बेरोजगारी और रोजगार संबंधी असुरक्षा के लिए आर्थिक मंदी आंशिक तौर पर ही जवाबदेह है। इसके पीछे सबसे प्रमुख वजह हैं कमजोर नीतियां। विस्तार से जानकारी दे रहे हैं **शंकर आचार्य**

देश की आबादी में कामकाजी लोगों की भारी और बढ़ती हुई तादाद उसके लिए बहुत अहम संसाधन है। करीब एक अरब ऐसे लोगों की मदद से हम तेज और स्थायी आर्थिक विकास हासिल कर सकते हैं। 16 वर्ष पहले मैंने चेतावनी दी थी कि यदि सही नीतियां नहीं अपनाई गईं तो यह जनांकीय लाभ गंवा दिया जाएगा। तब से अब तक एक के बाद एक सरकारों ने गलत या कमजोर नीतियां और कार्यक्रम ही अपनाए हैं। इसमें कमजोर सार्वजनिक शिक्षा और कौशल व्यवस्था तथा अत्यंत जटिल एवं रोजगार विरोधी श्रम कानून शामिल हैं। व्यापार और विनिमय दर नीतियां ऐसी हैं जो निर्यात और आयात प्रतिस्पर्धा वाले घरेलू उत्पादन में श्रम को हतोत्साहित करती हैं। कमजोर बुनियादी ढांचा जो उत्पादकता और संचार को प्रभावित करता है, कमजोर सरकारी बैंक और टाले जा सकने लायक नीतिगत झटके मसलन नोटबंदी आदि भी इसमें शामिल हैं। जून 2019 में प्रकाशित पीरियॉडिक लेबर फोर्स सर्वे (पीएलएफएस) 2017-18 इसके बेहद निराश करने वाले परिणाम सामने रखता है। आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2004-05 से 2017-18 के बीच देश में रोजगार की स्थिति में जबरदस्त गिरावट आई। खासतौर पर वर्ष 2011-12 के बाद लगभग तमाम संकेतकों पर गिरावट देखने को मिली। एक नजर डालें तो:

- सन 2011-12 से अब तक बेरोजगारी दर लगभग तीन गुनी बढ़कर 6.1 फीसदी हो गई है। चूंकि गरीबों के लिए बेरोजगार रह पाना संभव नहीं इसलिए इस बेरोजगारी में बड़ा हिस्सा शिक्षित बेरोजगारों का है।
- युवा (15 से 29 वर्ष) बेरोजगारी दर भी तीन गुना बढ़कर 2017-18 में 17.8 फीसदी हो गई। यह भी रोजगार में आ रही कमी को ही दर्शाता है। दिलचस्प बात यह है कि अनुमान के मुताबिक ही वर्ष 2017-18 में युवा बेरोजगारी की दर शिक्षा के स्तर के साथ तेजी से बढ़ी। अशिक्षितों में यह 7.1 फीसदी थी तो सेकंडरी स्कूल की शिक्षा वालों में 14.4 फीसदी तथा स्नातकों और परास्नातकों में 36 फीसदी। यह आंकड़ा गंभीर सामाजिक और आर्थिक निराशा का द्योतक है।
- खुली बेरोजगारी से भी अधिक परेशान करने वाले रुझान श्रम शक्ति की भागीदारी दर (एलएफपीआर) में देखने को मिलते हैं। यह दर श्रम लायक उम्र के लोगों में उन लोगों का अनुपात दर्शाती है जो रोजगार शुदा हैं या रोजगार चाहते हैं। एलएफपीआर में भारी गिरावट आई और यह 2004-05 के 64 फीसदी से घटकर 2017-18 में 50 फीसदी के नीचे आ गई। यानी देश की कामकाजी आबादी के आधे से कम के पास रोजगार है।
- आश्चर्य नहीं कि देश का कुल रोजगार 2011-12 और 2017-18 के बीच कई लाख घटा। सन 1972-73 में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण द्वारा रोजगार की स्थिति की शर्तें तय करने के बाद पहली बार ऐसा हुआ।
- कुल एलएफपीआर में गिरावट के एक बड़े हिस्से के लिए महिला एलएफपीआर में गिरावट उत्तरदायी है। यह 2004-05 के 43 फीसदी से घटकर 2017-18 में 23 फीसदी रह गई। सन 2018 में चीन में महिलाओं के लिए यह 61 फीसदी, इंडोनेशिया में 52 फीसदी और बांग्लादेश में 36 फीसदी था। महिला एलएफपीआर में इस गिरावट को शिक्षा में महिलाओं के बढ़ते नामांकन से जोड़कर भी नहीं देखा जा सकता है क्योंकि 20 से अधिक उम्र की महिलाओं के एलएफपीआर में 20 फीसदी से अधिक गिरावट देखी गई। ऐसे में महिलाओं के आर्थिक और सामाजिक सशक्तीकरण के लिए भविष्य दुखद है।
- गत माह संतोष मेहरोत्रा और ययाति परीदा ने एक पर्चे में कहा कि देश के एलएफपीआर में भारी गिरावट के लिए प्रमुख वजह यह है कि लोग लगातार काम न मिलने के चलते निराश होकर भी इस बाजार से बाहर हो जाते हैं। 15 से 29 की उम्र के युवाओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए वे कहते हैं कि इस श्रेणी में बेरोजगारों की तादाद सन 2004-05 के 7 करोड़ से बढ़कर 2017-18 में 10 करोड़ हो गई। रोजगार से विमुख श्रमशक्ति को ध्यान में रखें तो करीब 24 करोड़ की समायोजित श्रम शक्ति में से 12.5 करोड़ लोग बेरोजगार निकलेंगे। इस तरह देखें तो सन 2017-18 में समायोजित युवा बेरोजगारी का स्तर 52 फीसदी पहुंच जाएगा।
- बीते समय के दौरान क्षेत्रवार रोजगार हिस्सेदारी का दायरा भी दिखाता है कि श्रम शक्ति कम उत्पादकता वाले कृषि क्षेत्र से अधिक उत्पादकता वाले औद्योगिक और आधुनिक सेवाओं का रुख कर रहा है। इसके बावजूद सन 2017-18 में देश के कुल रोजगार में कृषि की हिस्सेदारी 44 फीसदी है। यह तमाम अन्य जी-20 देशों से अधिक है। इससे भी बुरी बात यह कि निर्माण सहित उद्योग जगत की हिस्सेदारी 2011-12 और 2017-18 के बीच ठहरी रही। सबसे निराश करने वाली बात यह कि विनिर्माण की हिस्सेदारी 2004-05 और 2017-18 के बीच 12 फीसदी पर स्थिर रही।
- राष्ट्रीय रोजगार में स्वरोजगार और आंशिक श्रमिकों की हिस्सेदारी आज भी 80 फीसदी है। यह कई वजहों से चिंतित करने वाली बात है। इन श्रेणियों को अक्सर व्यापक कार्य साझेदारी व्यवस्था से परिभाषित किया जाता है और बेरोजगारी से जोड़ा जाता है। इनमें कम औसत आय होने का खतरा भी रहता है। कई दफा तो यह न्यूनतम राष्ट्रीय आय के औसत से भी कम रहता है।
- सकारात्मक पहलू को देखें तो रोजगार में नियमित वेतन वाले कर्मचारियों की हिस्सेदारी 2004-05 के 14.4 फीसदी से बढ़कर 2017-18 में 22.8 फीसदी हो गई है। गैर कृषि क्षेत्र में बिना किसी लिखित अनुबंध के नियमित वेतन वाले कर्मियों की तादाद 2004-05 के 59 फीसदी से बढ़कर 2017-18 में 71 फीसदी हो गई है।

संक्षेप में कहा जाए तो देश में रोजगार की स्थिति बीते 15 वर्ष में बेहद खराब हुई है। आज यानी सन 2019-20 के मध्य में हालात वाकई खराब है क्योंकि आर्थिक वृद्धि में नाटकीय गिरावट दर्ज की गई है।

उपरोक्त रुझान को बदलने के लिए क्या किया जा सकता है? इस समस्या को हल करने की ऐसी कोई जादू की छड़ी नहीं है। हकीकत तो यह है कि वास्तव में नीतिगत और कार्यक्रम आधारित कमियों को दूर करने का कोई विकल्प नहीं है। जब तक हम इस दिशा में गंभीर प्रगति नहीं करेंगे तब तक बेरोजगारी, अल्परोजगार आदि में इजाफा होता रहेगा, श्रमिक हतोत्साहित होते रहेंगे और रोजगार की असुरक्षा बढ़ती रहेगी। इन बातों का देश की आर्थिक सुरक्षा और सामाजिक समरसता पर बुरा असर होगा।

(लेखक इक्रियर के मानद प्रोफेसर और भारत सरकार के पूर्व मुख्य आर्थिक सलाहकार हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं)

समझ में अंतर से उत्पन्न होते न्यायिक दुरुपयोग के अवसर

बाअदब

सोमशेखर सुंदरेशन

सर्वोच्च न्यायालय के पांच न्यायाधीशों द्वारा हाल में दिए गए फैसलों के बाद देश के पंचाटों द्वारा आर्थिक मामलों में किए जाने वाले न्याय के परिदृश्य में बदलाव आ सकता है। या फिर शायद ऐसा तब तक नहीं हो जब तक कि भविष्य में कोई कानूनी वाद इस फैसले के एक और उल्लंघन के विरुद्ध प्रस्तुत न हो।

उक्त पीठ वित्त अधिनियम 2017 के प्रावधानों की संवैधानिक वैधता पर विचार कर रहा था। इस अधिनियम ने विभिन्न विधानों के अधीन गठित होने वाले पंचाटों के घटक और उनकी नियुक्ति की शर्तों में परिवर्तन कर दिया। उक्त विधान को धन विधेयक के रूप में पारित किया गया।

तमाम अन्य विधान जिन्हें संसद के दोनों सदनों से पारित कर कानून बनाया गया था, उन्हें वित्त अधिनियम 2017 में संशोधन के माध्यम से संशोधित करने का प्रयास किया गया। वित्त अधिनियम बतौर विधान प्राथमिक तौर पर वित्तीय मामलों से संबंधित है जिसे सीधे लोकसभा के माध्यम से पारित किया जाना संभव था। असल चुनौती थी धारा 184 जिसके मुताबिक कार्यपालिका को इस बात का पूरा अधिकार था कि वह यह तय करे कि किसी पंचाट के सदस्यों की काबिलियत, नियुक्ति और सेवा की शर्तें क्या होंगी। पंचाट कुछ और नहीं बल्कि न्याय पाने का थोड़ा आसान रास्ता मुहैया कराते हैं। यहां सामान्य अदालतों की तरह उलझाऊ रास्ते नहीं होते। परंतु इससे कार्यपालिका से स्वतंत्रता की आवश्यकता समाप्त नहीं हो जाती। कार्यपालिका संसद के माध्यम से कानून पारित करके इन तमाम खंडों की मुखिया बनती है। ऐसे में इस न्याय दिलाने वाली प्रणाली की स्वतंत्रता पर सवाल उठना लाजिमी है। ऐसे विधेयकों को धन विधेयक के रूप में पारित किया जा सकता है अथवा नहीं, यह निर्धारित करने का निर्णय एक बड़े पीठ पर छोड़ दिया गया जबकि इस दौरान अधिकारों को इस प्रकार कार्यपालिका को सौंपने की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा गया। न्यायमूर्ति डी वाई चंद्रचूड़ ने ऐसे अधिकार हस्तांतरण की वैधता और धन विधेयक के इस्तेमाल दोनों पर असहमति जताई। यह निर्णय पढ़े जाने लायक है। इसके अलावा न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता ने भी आंशिक रूप से असहमति जताते हुए कहा कि कार्यपालिका को अधिकारों का हस्तांतरण असंवैधानिक है। ऐसे में भविष्य में जब कोई पीठ किसी अन्य विधान पर ऐसी दृष्टि डालेगा तो ऐसे मसलों पर कानून की भावना पर विचार करने की बात सामने आएगी।

विशुद्ध प्रभाव यह है कि कार्यपालिका द्वारा बनाए गए जो नियम अधिकार हस्तांतरण को मंजूरी दे रहे थे उन्हें सर्वसम्मत ढंग से खारिज कर दिया गया।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सन 1997 और 2010 में दिए गए फैसलों के प्रवर्तन का जो मामला 2019 में निपटा है उसे 2017 में पारित निर्णय के संदर्भ में देखें तो वह पहले के मामलों में दिए गए निर्देशों और उस वक्त स्थापित कानून का उल्लंघन करता है। चाहे कोई भी राजनीतिक दल सत्ता में हो, कार्यपालिका कानून पारित करा लेती है। वह भी ऐसे कानून जो सीधे-सीधे सर्वोच्च न्यायालय के पुराने दिशानिर्देशों और निर्णयों का उल्लंघन कर रहे हों। हालांकि ऐसे वैधानिक उपाय जो सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की अवज्ञा करते हैं, उनकी वापसी का तरीका तलाश लिया गया है। ऐसे निर्णय व्यवस्था को जवाबदेह नहीं बनाते।

संवैधानिक मसलों पर सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों की अवहेलना और उल्लंघन के मामलों पर नियंत्रण नहीं होना कार्यपालिका को इस बात के लिए प्रोत्साहित करता है कि वह बार-बार ऐसा उल्लंघन करे। अरुण शौरी की पुस्तक 'अनीता गेट्स बेल' इसी बारे में है। उपरोक्त तीनों निर्णयों को पढ़ा जाना चाहिए। देश की सबसे बड़ी अदालत द्वारा घोषित कानून के उल्लंघन की बात ठोस तरीके से साबित की गई है और ऐसे असंवैधानिक आचरण के बीच जवाबदेही पूरी तरह अनुपस्थित है।

ज्यादा समय नहीं हुआ जब सर्वोच्च न्यायालय के दो न्यायाधीशों के पीठ ने सरकार पर लागत आरोपित करते हुए कहा था कि उसने एक ऐसे विवाद को बढ़ावा दिया जो उसके द्वारा बहुत पहले निपटाया जा चुका था। इस मामले में वरिष्ठ विधिक अधिकारियों को शामिल कर एक खत्म हो चुके मसले को अवांछित तवज्जो दी गई थी। यह पता चला कि अतीत में भी बंद मसलों को दोबारा उभारने पर लागत वसूली गई है। राज्य के तीन स्तंभों की बात करें तो द्विपक्षीय मसलों से उलट संवैधानिक मसलों में संवैधानिक प्रतिरोध के मसले अदालतों के समक्ष अपील में जाते हैं। कार्यपालिका में मौजूद लोग इसे दीर्घकालिक अवसर की उपलब्धता के रूप में देखते हैं। ऐसी विसंगतिपूर्ण सोच ही गलत आचरण को बढ़ावा देती है।

इस बार एक स्पष्ट बात उच्च न्यायपालिका पर दीर्घकालिक सकारात्मक प्रभाव की संभावना और काम के गुणवत्ता तथा अनुभव की रही। सरकार से कहा गया कि वह पंचाट से सीधे सर्वोच्च न्यायालय में होने वाली अपीलों के मामले में स्थिति सुधारे और इन्हें पहले उच्च न्यायालय या खंड पीठ के पास भेजे। कहा गया है कि ऐसे कदम छह महीने के भीतर उठाए जाएं। वर्तमान में इसकी बहुत अधिक आवश्यकता है। अधिकांश आर्थिक विधानों को लेकर उपजे नियामकीय विवाद अक्सर उच्च न्यायालय के बजाय सीधे सर्वोच्च न्यायालय पहुंच जाते हैं। जब उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय जाते हैं और चूंकि उन्हें ऐसे मामलों का अनुभव नहीं होता (न तो अधिवक्ता के रूप में और न ही न्यायाधीश के रूप में) तो अनुभव की कमी के चलते न्यायिक निर्णय भी प्रभावित होते हैं। इस दिशा में ठोस उपाय किए जाने की आवश्यकता है।

कानाफूसी

शर्मिंदगी का सबब

कांग्रेस महासचिव और उत्तर प्रदेश की पार्टी प्रभारी प्रियंका गांधी वाड्रा को पिछले दिनों सोशल मीडिया पर काफी आलोचना का सामना करना पड़ा। दरअसल हुआ यह कि प्रियंका ने अपने ट्विटर हैंडल पर एक वीडियो साझा किया। उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के इस वीडियो में पुलिस के बर्बर लाठी चार्ज के बाद एक किसान को अचेत अवस्था में दिखाया गया था। उस दौरान पुलिस ने ट्रांस गंगा सिटी परियोजना के लिए अधिग्रहीत जमीन का अपर्याप्त मुआवजा मिलने का विरोध कर रहे किसानों के खिलाफ यह कार्रवाई की थी। प्रियंका द्वारा ट्विटर पर साझा किए गए वीडियो के वायरल होने पर राज्य सरकार ने जल्दी ही पूरा वीडियो जारी कर दिया जिसमें उक्त व्यक्ति बेहोशी का नाटक करता और उसके बाद दौड़ता हुआ नजर आया। बाद में प्रियंका ने अपने ट्विटर हैंडल से वीडियो हटा लिया।

स्थगित हुआ विरोध

कांग्रेस पार्टी ने आर्थिक मंदी को लेकर अपना प्रस्तावित विरोध प्रदर्शन टाल दिया है। यह प्रदर्शन पहले 30 नवंबर को दिल्ली के रामलीला मैदान पर आयोजित किया जाना था। अब यह प्रदर्शन 13 दिसंबर को समाप्त हो रहे संसद के शीतकालीन सत्र के बाद आयोजित किया जाएगा। प्रदर्शन की नई तारीख 14 दिसंबर रखी गई है। कांग्रेस सूत्रों का कहना है कि प्रदर्शन को टालने की असल वजह यह थी कि उस दिन रामलीला मैदान पहले से बुक था और वह भी एक कांग्रेस नेता द्वारा कराया गया था। पूर्व सांसद और दलित अधिकार कार्यकर्ता उदित राज तथा कुछ अन्य संगठनों ने 1 दिसंबर को सरकारी उपक्रमों के विनिवेश के खिलाफ विरोध प्रदर्शन का आयोजन किया है। उन्होंने मैदान को 30 नवंबर को भी बुक किया है। जब पार्टी ने उदित राज से पूछा कि क्या वह अपना कार्यक्रम टाल सकते हैं तो उन्होंने इनकार कर दिया जिसके बाद आर्थिक मंदी को लेकर विरोध प्रदर्शन को टालना पड़ा।

आपका पक्ष

प्लास्टिक से निजात पाने की कोशिश

देश में 2 अक्टूबर से एक ही बार इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगाया गया है। कई जगह ऐसे प्लास्टिक को बंद भी किया जा चुका है। लेकिन सवाल यह है कि क्या बिना आम जनता के जुड़े इस पर पूरी तरह पाबंदी लगाई जा सकती है। रोजमर्रा के इस्तेमाल में आने वाला प्लास्टिक खतरनाक रसायन पॉलि विनायल क्लोराइड है। इस रसायन के रक्त में घुलने से अनेक बीमारियों की आशंका बढ़ जाती है और गर्भ में पल रहा बच्चा भी रोग की गिरफ्त में आ सकता है। हर साल जो झुगियां जलकर राख हो जाती हैं उसमें पीवीसी का बड़ा हाथ होता है। यह बेहद निचले दर्जे का प्लास्टिक होता है जो आग जल्दी पकड़ता है तथा बुझने में घंटों लग जाते हैं। शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन में पाया कि तकरीबन नौ तरह के प्लास्टिक के कण खाने-पीने एवं अन्य तरीकों से मनुष्य के पेट में पहुंच रहे हैं और वे शरीर को

नुकसान पहुंचा रहे हैं। एक व्यक्ति एक हफ्ते में औसतन पांच ग्राम प्लास्टिक निगल रहा है। इसे एक बार इस्तेमाल करने के बाद आसानी से छुटकारा नहीं पाया जा सकता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि प्लास्टिक कम से कम 500 वर्षों तक खत्म नहीं होता है। प्लास्टिक से धीरे-धीरे रिसने वाला रसायन शरीर में पाई जाने वाली रक्षक कोशिकाओं को बहुत नुकसान पहुंचाता है। समुद्र में वर्ष 1950 से 2016 के बीच 66 वर्षों में जितना प्लास्टिक जमा हुआ है, उतना अगले केवल एक दशक में जमा हो जाएगा। इससे महासागरों में प्लास्टिक कचरा 30 करोड़ टन तक पहुंच सकता है। हर साल उत्पादित होने वाले कुल प्लास्टिक में से महज 20 फीसदी ही रिसाइकल हो पाता है। 39 फीसदी प्लास्टिक कचरा जमीन के अंदर दबाकर नष्ट किया जाता है और 15 फीसदी जला दिया जाता है। वैसे भी हमने पर्यावरण को बरबाद करने वाले सभी तौर तरीकों को अपना लिया है। चाहे वह जंगल काटने का मामला हो या खाद्य पदार्थ में कीटनाशकों और उर्वरकों का घुलता जहर। प्लास्टिक भी हमारे जीवन के किसी भी हिस्से से अछूता नहीं है। हम कुदरत द्वारा दिए गए संसाधनों को दरकिनार कर प्लास्टिक या इसके जैसे अन्य उत्पादों को अपने जीवन का अंग बनाते रहे तो वह दिन दूर नहीं जब हम खुद को प्लास्टिक के कफन दफन कर लेंगे।

नृपेंद्र अभिषेक, नई दिल्ली

प्लास्टिक को पूरी तरह प्रतिबंध करने के लिए जन भागीदारी की आवश्यकता है

ग्राहकों को सहूलियत दें खुदरा विक्रेता

खुदरा व्यापारी संगठनों ने ई-कॉमर्स कंपनियों के खिलाफ देशभर के 700 से अधिक शहरों में विरोध प्रदर्शन किया। व्यापारियों का कहना है कि ऑनलाइन कंपनियां एफडीआई नियमों का उल्लंघन कर रही हैं। उन्होंने सरकार से ऑनलाइन कंपनियों पर प्रतिबंध लगाने की मांग की है। देश में ऑनलाइन कंपनियां काफी प्रचलित हो गई हैं। इसकी मुख्य वजह घर बैठे सामान खरीदारी तथा बाजार मूल्य से उत्पाद का सस्ता मिलना है। किसी ऑनलाइन कंपनी में उत्पादक कंपनी से लेकर कोरियर कंपनी के कर्मियों का रोजगार जुड़ा होता है। ऐसे में खुदरा व्यापारियों की मांग अगर मान ली जाती हैं तो काफी लोगों का रोजगार छिन जाएगा। खुदरा व्यापारियों को अपने ग्राहकों को बनाए रखने पर जोर देना चाहिए जिसके लिए उन्हें ग्राहकों को सहूलियत देनी चाहिए।

मुकेश कुमार, गाजियाबाद

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।